International Journal of Multidisciplinary Trends

E-ISSN: 2709-9369
P-ISSN: 2709-9350
www.multisubjectjournal.com
IJMT 2021; 3(2): 93-95
Received: 14-05-2021
Accepted: 26-06-2021

अभिनन्दन पाण्डेय
शोध छात्र दर्शन एवं संस्कृति विभाग, महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र, भारत

Corresponding Author:
अभिनन्दन पाण्डेय
शोध छात्र दर्शन एवं संस्कृति विभाग, महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र, भारत

भारतीय दर्शन में वस्तुवादी अवधारणा का एक समीक्षात्मक अध्ययन

अभिनन्दन पाण्डेय

सारांश
वस्तुवादी अवधारणा वह अवधारणा है, जो बताती है कि हमारे अनुभव द्वारा प्रस्तुत जगत ही वस्तुतः सत् है तथा जो सत् ज्ञेय एवं अभिधेय भी है। इसके अनुसार जगत में ज्ञाता, ज्ञान व ज्ञेय तीनों की पृथक सत्ता है तथा उनमें अनुभव होने वाला सम्बन्ध भी वस्तुतः सत् अन्य शब्दों में विषय और विषयी, धर्म और धर्मी, अवयव और अवयवी सभी वास्तविक सत्ता है।
विश्व की विस्तार एवं मूल सत् रूप है अथवा असत् रूप है। यह जिज्ञासा भी दार्शनिकों के चिन्ता का विषय रही है। एक समान् दृष्टिगोचर होने वाले जगत् के बारे में चिन्तों के विचार भेद रहा है। पाश्चात्य दृष्टिकोण में वस्तुवाद प्रत्यवाद के विरोध के संदर्भ में आया।
यर्थाथवाद की वास्तविकता को समझने और भावनाओं से प्रभावित न होने वाला आचरण को वस्तुवाद कहते है। (Oxford Dictionary)
पाश्चात्य संदर्भ में–
ग्रीक दर्शन के पर्मिनाइडीज ने वस्तुवाद की अपनाया जिसके अनुसार ज्ञान के विषय की वास्ताविक सत्ता होती है, प्लेटों ने इस सिद्धान्त का विकास करके संवादिता सिद्धान्त का निर्माण किया जिसके अनुसार वास्तविक ज्ञान वह है जिसके अनुरूप वास्तविक सत्ता की विद्यमान है। मूर व रसेल इत्यादि वस्तुवादी दार्शनिक है।

कुटशब्दः वस्तुवाद, ज्ञात, श्रेय, ज्ञान, प्रत्ययवाद

प्रस्तावना
भारतीय दर्शन में वस्तुवादी अवधारणा के समीक्षात्मक अध्ययन का उद्देश्य प्रत्ययवाद व वस्तुवाद के उस बिन्दु को तलाशना है कि जिससे दोनों का वजूद समानान्तर होते हुये भी असितत्व बनाये रखने का मिलन बिन्दु क्या है। सम्पूर्ण भारतीय दर्शन के वस्तुवादी विचार को एक जगह लाने का प्रयास है, साथ ही साथ वस्तुवाद के वास्तविकता से रूबरू होने का प्रयास भी है, अपितु वस्तुवादी अवधारणा को लेकर कोई विशेष कार्य अभी तक भारतीय दर्शन में नहीं हुआ है। वस्तुवादी अवधारणा को सभी दर्शनों में कहीं न कहीं माना गया है। वर्तमान समय में वस्तुवाद किस तरह प्रासंगिक है या सम्मिलित है। ज्ञान और विषय के सम्बन्ध में प्रत्ययवाद व यथार्थवाद एक दूसरे के प्रतिद्वंद्वी रहे है। ज्ञान से वस्तु के वास्तविक स्वरूप में किसी प्रकार का परिवर्तन अथवा विकार उत्पन्न नहीं होता है। वस्तु का ज्ञान होने पर वस्तु के गुणों में किसी प्रकार की वृद्धि अथवा ह्रास नहीं होता है। इसी को वस्तुवाद कहा जाता है।
इस वस्तुवादी अवधारणा में विश्लेषणात्मक रूप से वस्तुवादी विचार को प्रस्तुत करते हुए समझने का प्रयास किया जा रहा है और पुनः जब जब विचार सरलतम रूप में समझ में आ जाते है तो उनको संश्लेषित करते हुए तुलनात्मक रूप से अध्ययन किया जा रहा है।
प्रत्येक विज्ञान विशाल विश्व के अनेकों विभागों में से किसी एक को चुन लेता है और एक विशिष्ट पद्धति अपनाकर उसी का सांगोपांग अध्ययन करता है जैसे– भौतिक विज्ञान विश्व के भौतिक क्षेत्र का, जड़ इत्यादि के स्वरूप का रसायन विज्ञान रसायन के क्षेत्र का मनोविज्ञान मानसिक क्षेत्र का विशिष्ट अध्ययन करता है, इसी प्रकार दर्शन समग्र विश्व का सामान्य अध्ययन है, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि दर्शन सारे वैज्ञानिक ज्ञान का योगफल है। दर्शन विज्ञान के एकीकृत ज्ञान प्राप्त करने के प्रयास का और आगे प्रयास है, सभी वैज्ञानिक ज्ञानों को मिलाकर उनके अंतिम रूप से एकता और समन्वय लाने का प्रयास करता है। विज्ञान कुछ बातों को स्वयं सिद्ध मानकर आगे बढ़ जाता है, परन्तु दर्शन कुछ भी मानकर नहीं चलता है।

"दर्शन जानकर मानता है जबकि विज्ञान मानकर जानता है।"
भारतीय दर्शन में न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा (कुमारित व प्रभाकर) दोनों के मत सांख्य, मध्व, वेदान्त, जैन तथा चार्वाक वस्तुवादी हैं। बौद्धों के वैभाषिक मत को भी वस्तुवादी माना जाता है। यद्यपि ये सभी मत वाह्य संसार को सत्य मानते हैं, किन्तु वाह्य सत्ता तथा हमारे द्वारा उसके ग्रहण के विषय में इसमें आंतरिक मतभेद हैं।

जैसे–न्याय–वैशेषिक वाह्य वस्तु का संवेदन इन्द्रिय तथा मन से होता हुआ आत्मा में पहुँच जाता है और आत्मा उस वस्तु को उसके अपने रूप में ही ग्रहण करती है, सांख्य का मत कुछ इससे भिन्न है। सांख्य के अनुसार हमारी चेतना (पुरूष), वाह्य वस्तु का संवेदन, मन अहंकार से होता हुआ बुद्धि में पहुँचता है, यहाँ हमारी चेतना ने वस्तु को सीधे ग्रहण नहीं किया, अपितु उसके बिम्ब के माध्यम से ग्रहण किया बाह्य सत्ता के विषय में वैभाषिक मत इन मतों से नितांत भिन्न है, बौद्ध मत में क्योंकि सब कुछ क्षणिक है अतः किसी के द्वारा किसी का ग्रहण किया जाना सम्भव नहीं है। यहाँ तो प्रत्यक्ष का अर्थ है– रूप, चक्षु और चित के क्षणों का एक साथ होना। चार्वाक मत में अन्य मतों से एक मूलभूत अन्तर दृष्टव्य है। अन्य मत चेतना को अभौतिक मानते हैं। अर्थात् उनके अनुसार वाह्य संसार में स्थित भौतिक वस्तुओं में तथा चेतना में एक मौलिक अन्तर है, किन्तु चार्वाक के अनुसार हमारी चेतना का भौतिक पदार्थों से कोई भौतिक अन्तर नहीं है, अपितु चेतना भी भौतिक पदार्थों के रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि अन्य गुणों की भाँति भौतिक पदार्थों से विकसित उसका एक गुण है। यह वह आधुनिक युग में विकसित कार्ल मार्क्स के भौतिकवाद के समान है।

विज्ञानवादियों के अनुसार जितने भी वाह्य पदार्थ को हम देखते हैं वे सब हमारी अपनी चेतना की सृष्टि है इनका हमारी बुद्धि में उत्पन्न कर दे या हमारी चेतना ही इन बिम्बों को उत्पन्न कर दे तो भी हमें यह इसी प्रकार अनुभूत होते रहेंगे। विज्ञानवादियों के अनुसार जितने भी वाह्य पदार्थ हम देखते हैं ये बस हमारी अपनी चेतना की सृष्टि है, इनका हमारी चेतना से पृथक कोई अस्तित्व नहीं है।

जगत की मूल प्रकृति के विषय में अद्वैतवाद भी एक मत है अद्वैत के अनुसार भी वाह्य पदार्थ चेतना की ही सृष्टि है, किन्तु उपनिषदों से प्राप्त अद्वैतवाद यह मानता है कि मूल तत्व केवल चेतना (ब्रह्म) ही है और वही सम्पूर्ण विश्व के रूप में परिणत हो जाता है। औपनिषदिक अद्वैतवाद वाह्य पदार्थ तत्वतः चेतना के ही रूप हैं।

सभी भारतीय दर्शनों में सत् के स्वरूप पर विचार किया गया है। यद्यपि सत/वस्तुवादी स्वरूप पर सभी दर्शनों में मतेक्य नहीं हैं। सभी चिन्तकों ने स्वमन्तव्य पोषक 'सत' की विचारधारा प्रस्तुत की है।

वेदान्त दर्शन से तात्पर्य शंकर के अद्वैत वेदान्त से है। इस दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण विश्व ब्रह्ममय है। संसार में नानान्व नहीं है, एकत्व ही यथार्थ है।

''सर्व खात्विदं ब्रह्म नेह नानास्ति किंचत''

ब्रह्म की ही वास्तविक सत्ता है। जगत की व्यवहारिक सत्ता है।

''ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवोबहौव नापरः''

ब्रह्म सत्य है, जगत मिथ्या है तथा जीव ब्रह्मस्वरूप ही है, ब्रह्म से भिन्न उसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। यह वेदान्त दर्शन का मुख्य सिद्धान्त व वस्तुवाद है।

बौद्ध दर्शन के अनुसार सम्पूर्ण चराचर जगत क्षणिक है। क्षणभंगवाद ही बौद्ध दर्शन का मूल सिद्धान्त है। वे प्रतिक्षण परिवर्तित होते रहते हैं।

सर्वम् क्षणिकं''

सब अस्तित्ववान पदार्थ क्षणिक हैं। अक्षणिक/नित्य पदार्थ की कल्पना शशश्रृंगवत् निरर्थक है। नित्य पदार्थ क्रम अथवा युगपत दोनों ही प्रकार से अर्थक्रिया नहीं कर सकता, जिसमें अर्थक्रिया नहीं होती वह सत् रूप भी नहीं हो सकता, सत वही है, जो अर्थक्रिया करे–

''अर्थक्रिया–सामर्थ्य लक्षण त्वाहस्तुनः''

–न्याय बिन्दु – पृष्ठ–17

बौद्ध दर्शन के अनुसार क्षणिक पदार्थ ही अर्थक्रिया करने में समर्थ है। अतः एक मात्र क्षणिक पदार्थ/वस्तु ही सत् रूप है।

जैन दर्शन के अनुसार वस्तुवाद नित्यानित्यात्मक उभय रूप है, वस्तु कवेल कूटस्थ भी नहीं है और केवल निरन्वय विनाशी भी नहीं हे।

सम्पूर्ण वस्तु जगत त्रयात्मक है–

''उत्पादव्ययध्रौव्ययुकं सत्''।

–उमास्वाति।

यह बहुतवादी वस्तुवादी दर्शन है। जगत की वास्तविकता को स्वीकार करता है। वस्तुवाद के अनुसार सत् को बाह्य, आभ्यान्तर, पारमार्थिक, व्यावहारिक, परिकल्पित परतंत्र आदि भेदों में विभक्त नहीं किया जा सकता। इन्द्रिय, मनं एवं अतीन्द्रिय ज्ञान इन सब साधनों से ज्ञात होने वाला प्रमेय वास्तविक है।

भारतीय दर्शन जगत में वस्तु के स्वरूप के सम्बन्ध में विभिन्न मतभेद हैं। वेदान्त दर्शन सत् (ब्रह्म) को एक कूटस्थ नित्य मानता है। बौद्ध के अनुसार सत् क्षणिक है मात्र उत्पाद–विनाशशील है, नित्यतायुक्त किसी पदार्थ का जगत में अस्तित्व ही नहीं है। सांख्यदर्शन चेतन तत्व रूप सत् पदार्थ को कूटस्थ नित्य एवं प्रकृति रूप सत् को परिणामी नित्य मानता है, न्याय वैशेषिक दर्शन अनेक पदार्थों में से आत्मा, परमाणु काल आदि सत् तत्वों को कूटस्थ नित्य मानता है तथा घट, पट आदि कुछ पदार्थों को मात्र उत्पाद एवं व्यय युक्त ही मानता है नित्य रूप नहीं मानता है।

दर्शन का मूल उद्देश्य वस्तु सत्ता का विश्लेषण करना है और जगत का विश्लेषण करने पर हम मूलतः तीन प्रकार के तत्व प्राप्त करते है–

1. धर्म
2. धर्मी
3. सम्बन्ध

यही मूल है कि सबकी अपनी स्वतंत्र सत्ता मानी जाए या यह कहना गलत होगा।

न्याय–वैशियिक ने सबको पृथक–2 मानकर और सत् रूप में इनका विश्लेषण किया।

सांख्य दर्शन में धर्म, धर्मी के परिवर्तनशील रूप माने गए है तथा इन्हें परस्पर विरोधी होने पर तादात्म्य कहा गया है। वेदान्त केवल ब्रह्म को ही मानता है यही सब कुछ है बौद्ध दर्शन के अनुसार केवल धर्म ही यथार्थ है, धर्मी या द्रव्य केवल मानस सम्प्रत्यय (कल्पना) है।

जैन व कुमारिल भट्ट भी केवल तादात्म्य सम्बन्ध को ही स्वीकार करते है अन्य को नहीं, प्रभाकर स्वीकार करते है लेकिन न्याय वैरोयिक की तरह नहीं।

'धर्म एवं धर्मी' के सम्बन्ध की सबसे मौलिक अवधारणा न्याय–वैशेषिक में ही उपलब्ध है। उतना अन्य दर्शन में नहीं है। जगत में जितना हमारे अनुभव में प्रस्तुत है वह सब वस्तुतः सत् ही है तथा जो सत् है वह श्रेय एवं अभिधेय भी है। जगत में ज्ञाता ज्ञान व श्रेय सबकी अपनी पृथक–2 सत्ता है तथा अनुभव होने वाले सम्बन्ध भी वस्तुतः सत् ही हैं। वस्तुवाद के अनुसार ''जिसका हमारे मन से स्वतंत्र अस्तित्व हो अर्थात् हमारे होने या न होने से उस पर कोई फर्क नहीं पड़ता है।

ज्ञेयं ज्ञानाधीनं। अर्थात् ज्ञान वस्तु की रचना के अनुरूप नहीं होता, बल्कि वस्तु ही ज्ञान के अनुरूप होती है।

वस्तुओं की सत्ता ज्ञान से स्वतंत्र है अथवा वाह्य वस्तुएं ज्ञान पर आश्रित है।

भारतीय दर्शन की भाषा में–
''मानं मेयाधीनम् मेयं मानाधीनम् वा।''

हम वाह्य वस्तुओं में विश्वास उनकी देखकर, स्पर्शकर चखकर, इत्यादि तरीके से करते है।
किसी भी दर्शन का वस्तुवादी अध्ययन इस भौतिकवादी युग की एक महत्वपूर्ण अनिवार्यता है यद्यपि सभी युगों में उस समय की वस्तुवादी मूल्यों का अध्ययन होता रहा तथापि इस वैज्ञानिक व नये बदलते युग में इसका मूल्य व महत्व और अधिक बढ़ गया है।
प्रत्ययवाद व वस्तुवाद के मिलन बिन्दु मिलने के बाद में समझने में भी मदद् मिलेगी कि

1. वस्तुवाद $\geq$ प्रत्ययवाद
2. वस्तुवाद ग प्रत्ययवाद $= 0$ (जहां ग ऐसा चिन्ह जो गणित में सामान्यतः $+, -, \div, \times$ प्रयोग होते है)

संदर्भ

1. चन्द्रधर एस0 (1998): भारतीय दर्शन आलोचना और अनुशीलन–मोती लाल बनारसी दास प्रकाशन
2. दत्त डी0एम0 (1932): द सीक्स वे आफ नोइंग रियलिज्म–London; G. Allen & Unwin
3. शास्त्री डी0एन0 (1976): क्यूरिक आफ इण्डियन रियलिज्म
4. माधवाचार्यः सर्वदर्शन संग्रह (प्रथम अध्याय)
5. जयराशि भट्टः तत्वोपल्लव सिंह
6. उमास्वाति (उमा स्वामी): तत्वार्थ सूत्र
7. मल्लिषेणः स्यादवाद मंजरी
8. हरिभद्रः अनेकान्त जय पताका
9. मिलिन्द पनाहो (1940) :सम्पा, आर0डी0वाडेकर, बम्बई
10. धर्मकीर्ति (1989): न्यायबिन्दु, सम्पा, पी0पीटरसन कलकत्ता
11. ईश्वर कृष्ण (1968): सांख्य कारिका, विस्तृत भूमिका, हिन्दी अनुवाद तथा संस्कृत और हिन्दी व्याख्या सहित, ब्रजमोहन चतुर्वेदी, एनपीएच दिल्ली
12. गौतमः न्यायसूत्र
13. जयन्त भट्ट (1996): न्याय मंजरी, सूर्य नारायण शुक्ला काशी सं0सी0, वाराणसी
14. गंगेरा उपाध्यायः तत्व चिन्तामणि
15. प्रशस्तवादः पदार्थ धर्म संग्रह (वैशेषिक मूल भाष्य) सम्पा दुण्ढिराज शास्त्री
16. जैमिनीः मीमांसा सूत्र।
17. शंकराचार्यः शारीरिक भाष्य (ब्रह्मसूत्र–शंकरभाष्य)
18. ए0सी0मुखर्जी (1938): द नेचर आफ सेल्फ, द इण्डियन प्रेस लि0 आल0
19. एस0राधा कृष्णन (1929, 1931): इण्डियन फिलॉस्फी 1–2 वॉल्यूम, एलेन एण्ड यूनियन लण्डन, द्वितीय
20. Ayer AJ. Foundations of Empirical knowledge Macmillan London 1940.
21. Dawk D. (Edition) Essays in Critical Realism A Cooperative study of the problem of knowledge, London 1920.
22. Karl P. Objective Knowledge: an evolutionary approach, Oxford 1972.